पूज्य लालचंदभाई का प्रवचन
शिकोहाबाद, ता। २९-३-१९८९
श्री समयसार, गाथा ७३, प्रवच नंबर P०५

ये श्री समयसारजी परमागम शास्त्र है। उसका कर्ता-कर्म अधिकार चलता है। उसकी तेहतर वीं गाथा है। उसमें शिष्यका प्रश्न है। अनादि काल से मैं दुखी हूं, पर्यायमें दुख है और उसके नाश का उपाय क्या है? उसकी विधि क्या है? विधि पूछते हैं। याने दुख का अभाव तो होगा, ऐसा तो विश्वास है। क्योंकि दुख है वह आत्मा का स्वभाव नहीं है। विभाव है। तो विभाव तो कायम रहनेवाली चीज नहीं है, वह तो निकल जाएगा। ऐसा तो विश्वास है| मगर दुःखका अभाव का उपाय नहीं जानता। विभाव होने से दुःख लंबे टाइम टिकता नहीं है। जैसे शरीर में बुखार आवे तो लंबे टाइम टिकता नहीं है, ऐसे राग, द्वेष, मोह का जो परिणाम है वह विभाव है, आत्मा का स्वभाव नहीं है।

आत्मा का स्वभाव ज्ञान है। ज्ञान तो टिकता है अनादि अनंत। ज्ञानका नाश होता नहीं है। और जो अज्ञान है, राग, द्वेष, मोह वह तो विभाव है। विभाव होने से वो टल जाता हैं। इतना तो विश्वास मेरे में आ गया है। आपकी कृपा से इतना तो ख्याल आ गया है। मगर वह दुःखका नाश का उपाय मैं नहीं जानता हूँ| उसकी विधि मैं नहीं जानता हूँ| हलवा बनता है वह मैं जानता हूं| हलवा खाने से पेट भरता है, शरीरमें शक्ति भी आती है| इतनी बात मैं जानता हूं| हलवा बनाने की विधि मैं नहीं जानता| इसी प्रकार मैं राग-द्वेष, क्रोध, मान, माया लोभ, ऐसा विकल्प भाव, कषाय भावरूप परिणमता हूं। और यह विभावभाव है वो टल जाता है| मगर वो टालने की विधि मैं नहीं जानता, कैसे टले? दुख का नाश का उपाय क्या है कृपा करके बताएं। आचार्य भगवानने उसके ऊपर करुणा करके उसका उपाय ७३ गाथामें बताया हैं।

प्रथम मैं आत्मा का जो स्वरूप बताऊंगा, उसका पहले निर्णय करना, की मैं कौन हूं? पहले निर्णय करना मानसिक ज्ञान में, अनुमान ज्ञानमें, पहले निर्णय कर ले और निर्णय करने के बाद, उसका लक्ष करने से और परका लक्ष छूटने से उसका अभाव हो जाएगा।

तो चार, आत्मा का चार विशेषण कहा है। कि मैं एक हूं, मैं शुद्ध हूं, मैं ममत्व रहित हूं, और मैं दर्शन-ज्ञानसे वर्तमान परिपूर्ण हूं। चार प्रकार आत्माका, आत्माका एक ही प्रकार है, चार धर्म से समझाया जाता है। एक भी आत्मा का धर्म है। शुद्ध भी आत्मा का धर्म है। निर्ममत्वभाव, आत्माका धर्म है। और दर्शन-ज्ञानसे परिपूर्ण वो आत्मा का धर्म है। आत्मा का धर्म धर्मीके साथ रहता है। आत्मा का जो धर्म है, याने स्वभाव है, वह धर्मी, याने स्वभाववाला, स्वभाव-स्वभाववाला एक चीज है। जो अज्ञानी, आत्मा के स्वभाव को जानता नहीं है। धर्मी को जानता नहीं है, अपने को जानता नहीं है। उसके लिए, वोही चार प्रकार का धर्मकी मुख्यतासे धर्मी जानने में आ जाता है। इसलिए धर्म के द्वारा धर्मी समजाया जाता हैं| तो दो धर्म के द्वारा धर्मीको बताया, अभी दो बाकी रहा।

Version 1: http://AtmaDharma.com or http://AtmaDharma.org Please report errors to rajesh@AtmaDharma.com

तीसरा धर्म है। धर्म याने आत्माका स्वभाव। स्वभाव याने त्रिकाल स्वभाव। क्षणिक स्वभाव, क्षणिक विभाव, क्षणिक स्वभाव और त्रिकाल स्वभाव। क्षणिक विभाव का नाम राग द्वेष, मोह। क्षणिक स्वभाव का नाम संवर, निर्जरा ने मोक्ष। और त्रिकाल स्वभावका नाम परमपारिणामिकभाव लक्षणसे लक्षित यै ज्ञानदर्शन से परिपूर्ण चिदानंद, ज्ञाननंद आत्मा ते हूं। विभाव, क्षणिक विभाव, क्षणिक स्वभाव और त्रिकाल स्वभाव।

तो यह त्रिकाल स्वभावके अंदर चार प्रकार का धर्म रहता है। अनादि अनंत रहता है। एक रहता है तीनों काल एक ही रहता है एक ज्ञायक भाव। 'एकोअहम'। और शुद्ध रहता है। अनादि अनंत। अशुद्ध होता ही नहीं है। और निर्मम, ममता रहित होता है। वीतरागी प्रतिमा है। ये आत्मा है ने, वीतरागी (प्रतिमा है)। जैसे जिन प्रतिमा वीतरागी है उसके साथ राग का संबंध कोई है नहीं। राग नहीं है तो राग का निमित भी उसके देह पर नहीं होता। समजमें आया? दिगम्बर प्रतिमा की बात चलती है। वो सचि प्रतिमा है। रागी नही है तो राग का निमित भी उसके ऊपर नही है। वीतरागी प्रतिमा जैसी बिंब है ऐसे मै भी वीतरागी प्रतिमा हूं। कभी के अभी? अभी! तीनो काल। निर्ममत्व शब्द आया ने? ममतासे मै रहित हूं अनादि अनंत। याने वीतरागी मै मूर्ति हूँ। चोथा बोलमे, में ज्ञान दर्शन से परिपूर्ण हूँ। अब तीसरा बोल की व्याख्या आचार्य भगवान समजाएंगे।

पुद्गल द्रव्य जिसका स्वामी है। ख्याल करना ये शुभ अशुभ भाव है उसका स्वामी आत्मा नही है। स्वामी समजे? मालिक! मालिक आत्मा नहीं है। कोई भाव है तो उसका मालिक भी होना चाहिये। जैसे ये बंगला है न मकान, तो उसका कोई मालिक होना चाहिए, उसका मालिक पुद्गल है। मकान का मालिक पुद्गल है।

मुमुक्षुः- कस्तूरचंदजी नही? कस्तूरचंदजी का मकान है।

उत्तरः- कस्तूरचंदजी का मकान नहीं है। वो कस्तूरचंदजी है वो ज्ञान का स्वामी है। मकानका स्वामी नहीं है। एक चीज़ का दो स्वामी नहीं होता है। पदार्थ एक और उसका स्वामी दो ऐसा होता नहीं है। वो दाल का व्यापार करता है तो दाल का स्वामी कौन?

मुमुक्षुः- दाल का स्वामी दाल।

उत्तरः- दाल पुद्गल है। रविंद्रबाबू नही।

ये पिंकी, दूसरा का क्या नाम?

मुमुक्षुः- बबलू.

उत्तरः- बबलू नही है। उसका स्वामी पुद्गल है। वो तो ठीक, ईधर तो अंदर की बात करते हैं। अंदर की बात, यह व्यवहार रत्नत्रय का परिणाम जो शुभ राग है उसका स्वामी कौन है?

उसका स्वामी पुद्गल है| यह सुनने का जो राग है ने वह प्रशस्त राग है! प्रशस्त (राग है)! जिनवाणी सुनने का जो भाव आया वह राग है। वह राग का स्वामी सुननेवाला नहीं है, उस राग का स्वामी जड़ पुद्गल है| जड़ का स्वामी जड़ होता है| चेतन-जीव की भ्रांति हो गई जगत को| शुभाशुभभाव चेतना है चेतन की साथे जोड़ें-बाजू में होता है तो चेतन होने की भ्रांति हो गई। चेतन होता नहीं है।

जैसे मैसूर स्टेटमे चंदन का वृक्ष बहोत होता है चंदन का वृक्ष सुखड़का। उसके पास सागका वृक्ष भी ऐसा उत्पन्न होता है, दूसरा वृक्ष भी पास पासमें होता है। तो उसकी जो सुगंध है ने उसमेँ बेठ जाती है

सुगंध। तो ठग लोग क्या करते हैं, वो लकड़ी काटकर ये भूलेश्वरमें ढगला करके बेचता हैं| तो लेने वाला लकड़ी लेकर सूंघता है तो उसमें सुगंध तो आती है, तो सुखड मानकर ले जाता है| बाद में कपाट में रख देता है। छह महीने बाद जब जरूर पड़ी तो अपने पास सुखड़ तो बहुत है, निकालो। चंदन बहुत है कपाल पर लगावो मिट जाएगा| लिया, लकडी था, सुखड़ कहां था? ऐसे चिदानंद भगवान के जोड़े, आत्मा के जोड़े, साथ में| जोड़े समजे? बाजू में| बाजू में शरीर भी है, कर्म भी है और शुभाशुभ भाव का लाकड़ा भी है। वह लकड़ी है, वह चेतन तो नहीं है, चेतन का परिणाम भी नहीं है। क्योंकि चेतन का लक्षण उसमें नहीं है। चेतन का लक्षण जानना देखना। और शुभाशुभभाव में जानने देखने की क्रिया होती नहीं है। भले जोड़े, बाजू में हो, तो भी यह चेतन हो सकता नहीं है।

वर राजा के पास अणवर रहता है, बाजू में, दूल्हा की पास में, क्या रहता है? अणवर है के नहीं अणवर? अणवर है मगर वह वर होता नहीं है। (दूल्हे की तरह) उसके गलेमें माला आती नहीं है। कन्या उसको देती नहीं है। और बाद में सब चले जाय। फिर अकेला अणवर आवे तो आवो भी नहीं कहै| हम तो अणवर को आवकार देते है - अब आब आवकार भी नही है| समजे?

वैसे शुभाशुभभाव बाजू में होते हैं आत्मा में नहीं होते हैं। वो धर्म को आत्मा में स्थापना वो गलत बात अज्ञान है। मिथ्यात्व है। भैया! तो वो शुभाशुभ भाव होता है, सुननेका जो राग आया, उसका स्वामी कौन है? आज तक तो माना था कि इसका स्वामी मैं हूं। मेरे में होता है। मैं उसको जानता हूं। मैं उसको करता हूं। मैं उसको भोक्ता हूं। आज तक तो ऐसा शल्य था। मगर जब समर्थ आचार्य भगवान मिले कुंदकुंद जैसे और टीकाकार मिले, उसकी वाणी में आया कि तू उसका स्वामी नहीं है, उसका स्वामी दूसरा है। (उसका) कौन स्वामी है? पुद्गल उसका स्वामी है। अज्ञानी जीव पूछता है के प्रभु, मैं उसका स्वामी नहि हूं, तो मेरे को स्वामी बताओ? कोई स्वामी बताओ तो स्वामित्व छूट जाएगा।

आगे बताते है कि पुद्गल जिसका स्वामी है। लिखा है, **पुद्गल द्रव्य जिसका स्वामी है**, मालिक है, आहाहा। **ऐसे जो क्रोधीभावोंका विश्वरूपत्व (अनेकरूपत्व)** क्रोध मान माया लोभ, तीव्र पाप। क्रोध मान माया लोभ मंद, वो शुभभाव, पुण्यतत्व है। जाति एक है। जाति कषाय की है। जाती कषाय की है। अकषाय वीतराग भाव उसमें नहीं है, इसलिए उसका स्वामी पुद्गल है। आहाहा! तू उसका स्वामी नहीं है। **उसके स्वामीपने रूप स्वयं सदा ही नहीं परिणमता होनेसे ममता रहित हूं** स्वयं मैं आत्मा, चिदानंद आत्मा हूं। और क्रोधादि भाव होता है मगर उसका स्वामी बनकर मैं कभी हो जाऊं, बन जाऊं स्वामी, ऐसा कभी होने वाला नहीं है। क्योंकि मैं उसका पुद्गल का स्वामी बनु तो मैं चैतन् रह सकता नहीं, तो जड़ हो जाय। तो आत्मा चेतन है, शुभाशुभभाव जड़भाव है। आहाहा! और जड़ से आत्माको लाभ मिले, तीन काल में होने वाला नहीं है। प्रभु। आहाहा! शांति से सुनने जैसी बात है। ये तो दिगम्बर शास्त्र में बात है। आपका ही शास्त्र है। हम तो पहले स्थानकवासी थे, बादमें दिगंबर हुआ। आहाहा!

हे प्रभु! शुभाशुभभाव व्यवहार रत्नत्रय का परिणाम, देव-गुरु-शास्त्रकी श्रद्धा का राग, नव तत्व की श्रद्धा का राग, छह द्रव्य का इन्द्रियज्ञान उसका स्वामी पुद्गल है। आत्मा स्वामी नहीं है। वो स्वामीरूपे कभी परिणमता नहीं है। क्रोधरुपे तो परिणमता है मगर क्रोध का स्वामी आत्मा बनता नहीं है। क्रोधरूप का परिणमन हो मगर उसका स्वामी पुद्गल भी हो और चेतन भी हो, एक भाव का दो मालिक होता

Version 1: http://AtmaDharma.com or http://AtmaDharma.org Please report errors to rajesh@AtmaDharma.com

नहीं है। आहाहा! शुभाशुभभाव, उसका स्वामी पुद्गल है। आहाहा! इसमें लिखा है उसका अर्थ है। संस्कृत में लिखा है। उसका अनुवाद तो जयपुर में हुआ है। जयचंद पंडित हो गया ने उसने अनुवाद किया है। **पुद्गलद्रव्य जिसका स्वामी है ऐसे जो क्रोधादिभावोंका विश्वरूपत्व उसके स्वामीपने रूप स्वयं सदा ही नहीं परिणमता** क्रोधादिरूप परिणमता है, मगर उसका स्वामीरुपे नही परिणमता है। तो साधक बनता है। और जब क्रोधादिरूप परिणमना बंध हो जाता है तो परमात्मा बन जाता है। पहले स्वामित्व बुध्दि छूटती है, पहले अभिप्राय सही हो जाता है। पहले

मुमुक्षुः- अभिप्राय सही हो जाता है। बहोत सूंदर।

उत्तरः- अभिप्राय पूर्वक क्रोध का परिणाम और अभिप्राय रहित क्रोधका परिणाम। बहोत फेर है। क्रोधादि भाव मेरा है ऐसा अभिप्राय रखता है तो अज्ञानी बन जाता है। और अभिप्राय सही हो गया के मैं उसका स्वामी नही, पुद्गल द्रव्य उसका स्वामी है। तो अभिप्राय में स्वामित्वपना छूट गया। क्रोध नहीं छुटता है, क्रोध छूट जाए तो तो परमात्मा हो जाता है। गृहस्थ अवस्था में क्रोध मान माया लोभ शुभाशुभ भाव रहता है। शुभाशुभ रहने पर भी मैं उसका स्वामी नहीं हूं, अभिप्राय पलट गया। पहले मानता था कि ये तत्व मेरा है, मैं कर्ता हूं, मैं भोक्ता हूं। श्री गुरु का उपदेश सुना के तू तो चेतन का स्वामी है, जड़ का स्वामी तूं नहीं है, नहीं हो सकता, हो सकता ही नहीं। आहाहा! अशक्य है। तो **उसके स्वामीपने रूप स्वयं सदा ही नहीं परिणमता होनेसे ममता रहित हूं**। आहाहा! मैं तो त्रिकाल निर्ममत्व वीतरागी प्रतिमा हूं। आहाहा! मै वीतरागी प्रतिमा अभी हूं। जैसे जिन बिम्ब है वीतरागी, ऐसे सब आत्मा भगवान है। आहाहा! देह को मत देख। कर्म को मत देख। राग को मत देख। शास्त्रज्ञान, इन्द्रियज्ञान को मत देख। गुण-गुणीभेद को मत देख। अकेला गुणी परमात्मा मैं हूं। आहाहा! ऐसा देख तो दिखाई देगा। देखनेवालोंको दिखता है, नहीँ देखनेवालों को दिखाई देता नहीं है। होने पर भी दिखाई नहीं देता। होने पर भी दिखाई नही देता। जैसे सूर्यका उदय हो और जन्मांध हो, तो उसको दिखाई नहीं देता। अनादि मिथ्यादृष्टि जन्मांध है उसको आत्मा होने पर भी दिखाई नहीं देता। देखनेवालोको दिखाई देता है। तो अनुभव हो जाता है।

तो कहते है की मैं **ममता रहित हूं**। उसका स्वामी नहीं हूं ना इसलिये मैं ममतारहित हूँ। तीन बोल हुआ। ममत्व छूट जाता है, क्रोध नहीं छूटता है। ममत्व छुटनेसे सम्यकदर्शन होता है, क्रोधादि भाव छुटनेसे अरिहंत दशा हो जाती है। पहले ममत्व छूटता है, श्रद्धा सम्यक होती है, चारित्र अंशे स्थिरता होती है। बादमें पूर्ण स्थिरता होने से क्रोध-मान-माया-लोभका, अनंतानुबंधी का अभाव पहले होता है। बाद में अप्रत्याख्यान, प्रत्याख्यान, संज्वलन, क्रोध-मान-माया-लोभका अभाव होकर, आत्मा परमात्मा हो जाता है। जो शक्ति में पडा था वो व्यक्त दशा में आया। जो शक्ति में है, शक्ति की व्यक्ति होती है। आत्मा में राग द्वेष मोह की शक्ति नहीं है। इसलिए वह शक्ति की व्यक्ति नहीं है। वह पुदगल की शक्ति की व्यक्ति है। वह पुदगल का परिणाम है, जीव का परिणाम नहीं है। पुदगल का परिणाम क्योंकि पुदगल के संग से होता है, इसलिए पुदगल परिणाम कहा जाता है। जैसे जल अग्नि के संयोग से उष्ण होता है तो उष्ण पर्याय का नाम भी अग्नि है, क्योंकि उष्णता लक्षण अग्नि का है, जल का नहीं है।

वैसे राग द्वेष मोह जो लक्षण है वह पुदगल का है। पुदगल। पुदगल का क्या है छुट्टा पडना भेगा होना समझा? पुद और गल हां पुनर्गलन! ऐसे यह शुभाशुभभाव पुनर्गलनवाला है। बढ़ता है घटता भी है

Version 1: http://AtmaDharma.com or http://AtmaDharma.org Please report errors to rajesh@AtmaDharma.com

तो यह पुदगल की जात है| पुदगल का संग से हुआ| यह मेरी जात नहीं है। उपयोग मेरी जात है जो मेरे संग से उत्पन्न होता है। सुशील बाबू वहां बैठा है बराबर, मैंने देखा ऐसा, नहीं है, वहां बैठा है, अच्छी बात है। मोटर में आया था ना इसलिए याद रहता है, सबका नाम याद नहीं रहता है।

क्या कहा? मैं निर्ममत्व अभी, ये मैं निर्ममत्व हूं, वोही पर्याय में ममत्वभाव का नाश करने का उपाय है। मैं निर्मोही हूं, वही मोह का नाश का उपाय है। मैं अभी निर्मोही हूं, तो मैं निर्मोही हूं तो परिणाम में से मोह चला जाता है। आहाहा! मैं अभी निर्मम हूं, तो पर्याय में मेरापन, ममता छूट जाती है। ममता जन्य दुख भी (छूट जाता है), ममता में दुख होता है। आहाहा!

तीन बात कही, अब चौथी बात। **चिन्मात्र ज्योतिका** ज्ञान मात्र आत्मा का स्वभाव। चिन्मात्र शब्द का अर्थ क्या है? "चिन्न" और "मात्र" शब्द है। "चिन्न" माने ज्ञानमात्र। ज्ञान "मात्र" जो शब्द आया वह राग, द्वेष, मोह का निषेध वाचक है। आत्मा मात्र ज्ञान ही है कथंचित ज्ञानमय और कथंचित रागमय नहीं, क्योंकि राग आत्मा का धर्म ही नहीं है। इसलिए कथंचित लागू पड़ता नहीं है| राग आत्मा का नहीं है इसलिए कथंचित लागू पड़ता नहीं है। ज्ञान तो आत्मा का धर्म है। इसलिए आत्मा कथंचित ज्ञानमय, कथंचित आनंदमय, कथंचित सुखमय ऐसे ऐसे है। तो ज्ञानमय है, सर्वथा ज्ञानमय है। कथंचित ज्ञानमय और कथंचित रागमय ऐसा है नही। ज्ञानमात्र, शब्द "मात्र", ओन्ली, फक्त। मात्र का अर्थ क्या? ओन्ली, फक्त आत्मा ज्ञानमय है।

मुमुक्षुः- सिर्फ ज्ञानमय है।

उत्तरः- हां, शब्द मिले नहीं हिंदी का, सिर्फ ज्ञानमय है। आहाहा! एकांत हो जाएगा! के हमको इष्ट हैं| साध्य की सिद्धि हो जाती है| उसमे (साध्य की सिद्धि हो जाती है)| आत्मा में अनुभव होता है| कथंचित ज्ञानमय और कथंचित रागमय, आहाहा! वह अनिर्णय है, वह निर्णय नहीं है। आहाहा! अभी निर्णय की बात आई, इसलिए ध्वनि आई। निर्णय तो करो पहले कि मेरा स्वरूप क्या है? आहाहा! मेरे में ममत्व होता है कि और जगह ममत्वभाव रहेता है? तेरे में ममत्वभाव रहता है कि और जगह में रहता है? राग तेरे में होता है की और जगह पर है? और जगह पर है, मेरी जगह में नहीं है। मेरे क्षेत्र में राग का प्रवेश नहीं है| मेरे द्रव्य में राग नही, क्षेत्र में राग नहीं, कालमें राग नहीं, भाव में राग नहीं है। मैं तो ज्ञान मात्र आत्मा हूं| आहाहा! ज्ञान मात्र शब्द है वह विभाव का निषेधवाचक मात्र शब्द है सिर्फ, सिर्फ, ओनली, केवल। आहाहा! केवल ज्ञानमात्र में मूर्ति हूं ज्ञानकी। आहाहा! ज्ञान की डबी है आत्मा, ज्ञान-आनंद से भरा हुआ समुद्र आत्मा है।

आत्मा में ज्ञान है मगर अज्ञान नहीं है। अज्ञान धर्म आत्मा का नहीं है। आहाहा! आत्मा कभी अज्ञानी हुआ ही नहीं है, होगा भी नहीं। चिंता मत कर! तू तो तीनों काल, चिन्मात्र ज्ञानमय रहा, आज भी है, अनंतकाल रहेनेवाला है। निशंक हो जा निशंक हो जा। मेरे स्वभाव में राग का प्रवेश नहीं है। तीन काल में हुआ नहीं, होता नहीं, और होगा भी नहीं। उसका नाम प्रतिक्रमण, प्रत्याखान, आलोचना है। आहाहा! भूतकाल में था नहीं, प्रतिक्रमण हो गया। वर्तमान में है नहीं आलोचना हो गया। भविष्य में होनेवाला नहीं है वह प्रत्याख्यान हो गया। सोनगढ़का संत कोई प्रतिक्रमण, प्रत्याख्यान, आलोचना, सामायिक को मानता है कि नहीं? अरे भैया! तूने स्वरूप सुना ही नहीं है कि प्रतिक्रमण, आलोचना का

स्वरूप है, सुना ही नहीं है। आहा| भूतकाल में देखता हूं में, आत्माको तो, राग द्वेष उसमें नहीं था। वर्तमान में नहीं है, और भविष्यकाल में कोई काल ऐसा नहीं आएगा कि रागी में हो जाऊंगा। मैं तो निरागी, परमात्मा हूं चिन्मात्र ज्योति हूं। यह स्वभाव की बात जगत ने सुनी नहीं है। विभाव की बात सुनी है मगर स्वभाव की बात सुनी नहीं है। आहाहा! सुनी नहीं है। कि आचार्य भगवान ने कहा कि तुने आज तक क्रोध-मान-माया, कर्ता-भोक्ता की बात सुनी, मगर चिन्मात्र आत्मा है वो बात तूने आज तक सुनी नहीं है। याने रुचिपूर्वक सुनी नहीं है। सुनने का फल आया नहीं है तो सुनी नहीं है| सुनने का फल आना चाहिए तो सुनी कहा जाता है।

मुमुक्षुः- अमृत बरसे हैं पंचम कालमाँ।

उत्तरः- चिन्मात्र आत्मा तो, आत्मा तो चिन्मात्र भूतकाल में राग का प्रवेश नहीं था, वर्तमान में राग मेरे में नहीं है, जहां मैं हूं वहां राग नहीं है, और जहां राग है वहां मैं नहीं। राग राग में रहने दो, राग राग में रहने दो। में तो ज्ञानमय चिन्मात्र आत्मा हूं। भूतकाल में था नहीं, वर्तमान में है नहीं, भविष्य काल में होगा नहीं। आहाहा! इसका नाम प्रतिक्रमण, प्रत्याखान ने आलोचना है। विकल्प का नाम, शुभभाव का नाम प्रतिक्रमण नहीं है। वह तो ज़हर है, वह तो आस्त्रवतत्व है, भैया, आहाहा! यह सब दिगंबर संतो ने कही बात है। हों! वो मेरे घर की बात नहीं है, आहाहा! व्यवहार प्रतिक्रमण, प्रत्याख्यान, आलोचना का नाम उसने ज़हर कहा, ज़हरका घड़ा है वृक्ष, जहर का वृक्ष है, विषकुंभ है, विषकुंभ घड़ा, विषका हैं| आहाहा! एक टीपा विषका पिए तो मरण हो जाए। वह तो गटागट पिता है शुभभाव से धर्म होता है, शुभभाव से धर्म होता है| शुभभाव मेरेमें होता हैं, शुभभाव मै करने वाला हूं, उससे मेरे को धर्म होगा, लाभ होगा, प्रभु! आहाहा! भूल गया तू भूल गया! स्वभाव को भूल गया। चिन्मात्र मैं आत्मा हूं। "मात्र" शब्द से राग को निकाल दिया, राग को निकाल दिया। आहाहा! मेरे द्रव्य में राग नहीं मेरे द्रव्य में ज्ञान, हमारा क्षेत्र में ज्ञान, राग नहीं। हमारे स्वभाव में उपयोग, राग नही। हमारे भावमें ज्ञान, राग नहीं। आहाहा! द्रव्य क्षेत्र काल भाव मैंने तपासा। आचार्य भगवान कहते हैं तो मैंने तपास करके लिखा कि राग मेरे स्वभाव में नहीं है। और आपके स्वभावमें भी नहीं है। ऐसा आत्मा का ज्ञान और श्रद्धान कर लो उसका नाम निश्चय मोक्षमार्ग है। **चिन्मात्र** आहाहा! एक शब्द है। सिर्फ, ओन्ली, फक्त। चिन्मात्र, ज्ञानमात्र, जाननेवाला है आहाहा! करनेवाला नहीं है। आहाहा! आत्मा का स्वभाव ज्ञान, तो ज्ञानका स्वभाव आत्मा को जानना। उसमें द्रव्य, गुण और पर्याय तीन आ गया! पहले "आत्मा" - द्रव्य, उसका स्वभाव "ज्ञान" - गुण आ गया। ज्ञानका स्वभाव आत्माको "जानना" - पर्याय आ गई। द्रव्य, गुण, पर्याय। आहाहा! अकेला द्रव्यको मानता है या पर्याय? अरे द्रव्य, गुण, पर्याय है ऐसा जानता है। ऐसा ज्ञान जानता है। आहाहा! द्रव्य को आत्मा मानकर द्रव्य गुण पर्याय को जानता है। (द्रव्यको मानकर द्रव्यगुण पर्याय को) जानता है!

मुमुक्षुः- सम्यक एकांत पूर्वक सम्यक अनेकांत!

उत्तरः- अनेकांत होता है। जिसको आत्मा का भान होता है उसको परिणाम का ज्ञान, आत्माका भान होता है उसको पर्याय का ज्ञान हो जाता है। सम्यकज्ञान। **चिन्नमात्र ज्योतिका वस्तुस्वभावसे ही सामान्य और विशेषसे पारीपूर्णता होनेसे** वस्तु सामान्य विशेष रूप है। सामान्य दर्शनगुण का नाम सामान्य है। और विशेष ज्ञानगुण का नाम विशेष है। वह दर्शन उपयोग की बात नहीं, और ज्ञान उपयोग,

Version 1: http://AtmaDharma.com or http://AtmaDharma.org Please report errors to rajesh@AtmaDharma.com

मति ज्ञान, श्रुत ज्ञान की बात नहीं। त्रिकाली गुण (की बात है)। दर्शन नामका गुण है, वह उसका सामान्य और ज्ञान गुण है विशेष। तो दर्शन और ज्ञान ऐसा दो गुण से में परिपूर्ण हूं। आहाहा! केवलज्ञान हो तो मैं परिपूर्ण होउगा तभी, अभी अपूर्ण? और तभी पूर्ण? तो केवलज्ञान होने वाला ही नहीं है। केवलज्ञान किसको होता है कि, वर्तमान में परिपूर्ण हूं, ऐसी अंतर्दृष्टि से जो आत्मा का अनुभव करता है और उस में लीन हो जाता है चारित्र, तो केवल ज्ञान प्रगट हो जाता है। केवलज्ञान की शक्ति अंदर पड़ी है तो शक्ति की व्यक्ति प्रगट हो जाती है। ज्ञानावरण कर्म का अभाव हुआ इसलिए केवलज्ञान उत्पन्न हुआ, ऐसा नहीं है, वह निमित्त प्रधान कथन है। शक्ति की व्यक्ति क्षणिक उपादान प्रधान कथन है। और मैं त्रिकाल उपादान, आहाहा! उसकी बात तो क्या करें?

मैं ज्ञान दर्शन से पारी पूर्ण हूं, अभी-अभी की बात है। सभी आत्मा ऐसा है अभी, कभी? अभी। आहाहा! मगर श्रद्धा में ले तो ज्ञान में वह (आत्मा), आहाहा! प्रतिमा की स्थापना कर दे। उपयोग में उपयोग है, उपयोग में प्रतिमा, यह प्रतिमा, वितरागीप्रतिमा, उसकी स्थापना कर दे। वह प्रतिष्ठा है, वह प्रतिष्ठा है। प्रतिष्ठित कर दे आत्मा को। आहाहा! **होनेसे**, **मैं ज्ञानदर्शन से पारीपूर्ण हूँ। - ऐसा मैं**, अभी चार बोल आया। **ऐसा मैं**, अभी जिसको आत्मा का अनुभव होने वाला है, इसको पूर्व भूमिका में, यह व्यवहार आता है। आत्मा जैसा है वैसा निर्णय करना उसका नाम व्यवहार है, अनुभव करना उसका नाम निश्चय है। व्यवहार को मानता है कि नहीं तुम? यह ज्ञानी ही व्यवहार निश्चय को जानता है, अज्ञानी के पास निश्चय भी नहीं ने व्यवहार भी नहीं। आहाहा! अज्ञानी तो मानता है कि शुभभाव करना व्यवहार। नहीं-नहीं जैसा आत्मा का स्वभाव है ऐसा भावमन के संबंध से, आत्मा का निर्णय करना अनुभव पहले, उसका नाम व्यवहार है। आहाहा! और वो विकल्पातित, मनातित होकर प्रत्यक्ष आत्मा का अनुभव होता है उसका नाम निश्चय है। ऐसा जीव लिया है, ऐसा जीव लिया हैं, शिष्य ऐसा लिया है की, जो सुने, सुने, बादमें निर्णय करके अनुभव कर ले। ऐसा शिष्य निकटवर्ती शिष्य है। निकटवर्ती याने आत्माकी रुचिवाला, इसलिए निकटवर्ती, मेरे पास आया इसलिए निकटवर्ती नहि। क्या कहा? मेरे पास आया है इसके लिये निकटवर्ती नही है। आत्मा की रूचि उसको जग गई है वह प्रश्नसे ज्ञानीने माप निकाल दिया। आहाहा! प्रश्न से वो जान गया कि वह आत्मार्थी जीव है, निकटवर्ती है। अभी उसको आत्मा का निर्णय होकर अनुभव हो जाएगा और इधर बैठ बैठ कर अनुभव करके बाहर जाएगा, ऐसा तैयारीवाला आत्मा है।

शिष्य भी कोई ऊंचे प्रकार का, गुरु तो ऊंचा है ही। आहाहा! गुरु शिष्य की संधि है। आहाहा! गुरु भी कोई अपूर्व ने शिष्य भी कोई रुचिवाला, तैयारीवाला, निकटभवी, भव्य तो था, मगर निकटभवी जीव। पूछता है प्रभु, मैं चार गतिका दुख भोक्ता हूं, अभी दुःख सहन होता नहीं है। मैं राजा हुआ, शेठिया हुआ, मैं देव हुआ, मगर सुख शांति हुई नहि। दुःखका नाश (और) सुखकी प्रगटता कैसे हो? वो कृपा करके मेरे को समझाओ। ऐसा नहीं आकर पूछा, कि मेरे को लड़का हो जाए केसा, मेरे को लक्ष्मी कैसे हो जाए, मैं कोर्ट में, कचहरी में केस (मुकदमा) केसे जीतू? मेरे को थोड़ा बताओ..। ऐसा शिष्य है नहीं। वो वितरागी संत के पास जाना, वो लायकात है। लायकातवाला जाता है। तो अल्प काल में उसका मोक्ष होनेवाला है। उसके पास तो आत्मा है| गुरु के पास क्या है (आत्मा) मंत्र तो है, मगर भेदज्ञान का मंत्र है जिसकी साधना से देव हाजिर होता है। कौन सा देव? चैतन्यदेव है।

Version 1: http://AtmaDharma.com or http://AtmaDharma.org Please report errors to rajesh@AtmaDharma.com

जयपुर मे ऐसी बात आयी कि भेदज्ञान से देव हाजिर होता है। तो बात चली, यह पंडित अच्छा है अपने लिए, खान-घी मे (गुप्तरूप/चुपके से) आवे तो पूछ ले, मंत्र ले और देव आवे तो मांग ले। मंत्र चाहिए मांग लेवे, कोई रोगी हूं तो निरोगी हो जाऊं। कोई पुत्र नहीं है तो पुत्र मांग ले। धन नहीं है तो धन मांग ले। सत्ता प्रिय है तो मेरेको प्रमुख बनना है| वडाप्रधान बनना हैं। मांग लू| आहाहा! दूसरे दिन मेरे कान पर आया कि यह बात चलती है। दूसरे दिन खुलासा किया कि भैया भेदज्ञान का मंत्र से यह देव हाजिर होता है यह परमात्माका दर्शन होता है, उसका नाम देव है| देवों का भी देव है। देवाधिदेव आत्मा है। सब आत्मा हो। सब आत्मा की बात है। परमात्मा है सब, भगवान है, भगवान हो जाओ ऐसा आशीर्वाद गुरुदेव ने दिया है। आहाहा! तमे पामर छो, तमे समझी नहीं शकों, क्या हिंदी में? तुम समझ नहीं सकते ऊंची बात है, ऊंची बात है ऐसा नहीं है। यह एकड़ा नी बात है। शुरुआत की बात है। पहला पाठ पहली चोपड़ी का पाठ है। आहाहा! भेदज्ञान कर, भेदज्ञान का विचार सो व्यवहार, अभेद का अनुभव सो निश्चय। आहाहा! क्या कहा? भेदज्ञान का विचार व्यवहार, क्योंकि वह मानसिक है, उसमे आनंद आता नहीं है, इसलिए व्यवहार है। अभेद का अनुभव में आनंद आता है तो वह निश्चय है। आहाहा! सुबोधिजी? ख्याल आया कि नहीं? आहाहा! भिंड है ना उसके गांव है न १२ दिनकी शिविर।

ऐसा मैं आकाशादि द्रव्यकी भांति पारमार्थिक वस्तु विशेष हूँ। आहाहा! जैसे आकाश निर्मल है, परिपूर्ण शुद्ध है, ऐसा मैं विशिष्ट प्रकार का, आकाश की भांति मैं भी निरंजन हूं, अंजन मेरे में नहीं है। आहाहा! आकाश का दृष्टांत दिया। अर्थात, आकाश के लिए, आकाश किसी का आधार से नहीं रहता है। निरावलंबी है। ऐसा मैं भी निरावलंबी हूं। देह का आधार अभी मेरे को नहीं है, देह के आधारसे मैं रहा ही नहीं हूं, शुभाशुभ भावका आधार भी मेरेको नही है, मैं तो आकाशकी भांति मैं, आहाहा! निरावलंबी तत्व हूं, परिपूर्ण शुद्ध हूं, निरंजन हूं, आहाहा! आकाश में मैल होता नहीं है ऐसे। **परमार्थिक वस्तु विशेष** खास, परमार्थिक वस्तु विशेष खास वस्तु खास! **इसलिए अभ मैं समस्त परद्रव्य प्रवृत्तिसे निवृत्ति द्वारा** याने पर द्रव्य का लक्ष छोड़कर, पर द्रव्य की निवृत्ति का अर्थ पर द्रव्य का लक्ष छोड़कर, पर द्रव्य को आकाश में भेजने की बात नहीं है, लक्ष छूट जाता है..., आहाहा! पर द्रव्य तो रहता है, पर द्रव्य का त्याग नहीं होता है, पर द्रव्य का लक्ष का त्याग होता है, और आत्मा का लक्षका ग्रहण होता है, ग्रहण पूर्वक त्याग।

परद्रव्य प्रवृत्तिसे निवृत्ति द्वारा, इसी आत्मस्वभावमें निश्चल रहता हुआ, समस्त परद्रव्यके निमित्तसे विशेषरूप चेतनमें होती हुई, वो बात नयी आयी। देखो। **चेतनमें** चेतन में कल्लोल नहीं होता है। चेतन का विशेष जो है, पर्याय में, उसमें **होती हुई चंचल कल्लोलोके निरोधसे**, आहाहा! क्या कहा? के पर्याय जो है, ज्ञानकी पर्याय विशेष। ज्ञानमें चंचलता नही है। ज्ञान तो स्थिर होता है, ज्ञानगुण, आत्मा। उसकी जो पर्याय है, बहिर्मुख पर्याय, उसमें चंचलता अती है। क्योंकि उसके अंदर ज्ञेय से ज्ञेयान्तर ज्ञान, ज्ञेय से ज्ञेयान्तर, इसको जानू, उसको जानू, तो कल्लोल होता है। जैसे समुद्र में मौजामें (लहरोमें) कल्लोल है, तो समुद्र तो स्थिर है, समुद्र तो स्थिर है। ऐसे आत्मा तो स्थिर है, मगर जो पर का लक्षसे वो विशेष चेतनमें, कल्लोल उत्पन्न होता था, विकल्प, आहाहा! वह **चेतनमें होते हुए चंचल कल्लोलोके निरोधसे**, आहाहा! उसका निरोध कर दिया। ज्ञान तो बहिरमुख था, तो ज्ञान अंतरमुख होता है, तो चंचलता निकल

Version 1: http://AtmaDharma.com or http://AtmaDharma.org Please report errors to rajesh@AtmaDharma.com

जाती है।

निरोधसे इसको ही अनुभव करता हुआ, अपने अज्ञानसे आत्मामें उत्पन्न होते हुए जो यह क्रोधादिक भाव है, उन सबका क्षय करता हूँ। कल्लोल मिटा तो क्रोध भी मिट गया। पर को जानना बंध हुआ। कल्लोल मिटा तो क्रोध भी मिट गया।

यह तो कोई शास्त्र है! दैवी शास्त्र है, भागवती शास्त्र है, ऐसा टिकाकार ने नाम दिया है। परमागम है। अंधाकी आंख है, अंधेकी आंख है, आहाहा! कोई ऐसा समये कुंदकुंदाचार्य भगवानने शास्त्र की रचना, नवतत्व का भर दिया अंदरमे। **उन सबका क्षय करता हूं - ऐसा आत्मामें निश्चय करके**, बस, अहिया तक तो अभी अज्ञानी है, अहिया तक तो अज्ञानी है मगर ज्ञानी होने वाला है, ऐसा अज्ञानी है। हाँ! अज्ञानी लंबायगा नहि, अज्ञान लंबेगा नहीं, अभी अज्ञान टल जाएगा। अज्ञानी है, मगर ज्ञानी होने की तैयारी है। ऐसा अज्ञानी है। वो निर्णय करता है। आहाहा! निर्णय यथार्थ हो गया तो आधी बाजी तो हाथ में आ गई। आधा काम हो गया। निर्णय मात्र निर्णय, इसमे एक पैसाका खर्च नहीं| बैठे-बैठे विचार करता है कि मैं एक हूँ, शुद्ध हूं, ममत्व हिन हूँ, ज्ञानदर्शन से परिपूर्ण परमात्मा हूं| ऐसा मन का संग से निर्णय करता है, ज्ञान का संग से अनुभव होता है| मन का संग से तो निर्णय होता है, वह निर्णय उसमे आनंद है नहीं। आहाहा! निर्णय में आनंद नहीं है, अनुभव में आनंद है। निर्णय किया, आहाहा! अभी अज्ञान कैसे टल जाता है, उसको वो बात आती है|

ऐसा आत्मामें निश्चय करके जिसने, जिस जीवने **बहुत समयसे पकड़े हुए जहाजको छोड़ दिया है।** जहाज आता है समुद्र में, उसमें वा वंटोल होता है तो घुमरी हो जाती है, उसमें तो घुमरी में वो वहाण, वो जहाज पकड़ जाता है, कितने भी हलेसा मारो तो निकलता नहीं है। तो जब वह पवन शांत हो जाता है, शांत पवन हो जाता है। पवन का जोर आया, समझा? वो शांत होता है पवन, तो आपोआप वो शांत हो जाता है। तो चकरी बंद हो जाती है तो वहाण निकल जाता है, वहाण निकल जाता है। ऐसे विकल्प के चकरावेमें, ऐसा हू, ऐसा हूं, ऐसा हूं, ऐसा हूँ, अहाहा! उसमें वह आत्मा फस गया है, विकल्प की जाल में फ़स गया है। मगर ऐसा अज्ञानी है के अभी निकल जाएगा| ज्यादा देर नहीं है। ये भव में काम होनेवाला है दूसरा भव आनेवाला नहीं है।

मुमुक्षुः- आपका मंगल आशिर्वाद, श्रीमद्जी ने लिखा है ज्ञानीकी कृपा दृष्टि यही सम्यकदर्शन है।

उत्तरः- पहले इसको संत को जानता है, उसकी दृष्टि सत पर आ जाती है। आहाहा! जो संत को पहचानता है उसकी दृष्टि सत्य हो जाती है। क्योंकी संत तो आत्मा की बात करेगा, दूसरी बात तो उसके पास है नहीं। एक ही काम, २४ घंटा आत्मा का, आत्मा की बात आत्मा की बात आत्मा की बात आत्मा की बात हां। ३३ सागरोपम। इधर का बारह अंग धारी, समजे? मुनिराज, स्वर्ग होता है तो ३३ सागारोपममें जाता है। ३३ सागरोपम तत्व की ही चर्चा चलती है, सर्वार्थसिद्धिमें। ३३ सागरोपम सर्वार्थसिद्धिमें। तो सर्वार्थसिद्धिमें ३३ सागरोपम हो गया पूरा, अरे! पूरा हो गया| अरे कितना? अबजो वर्ष, असंख्य अबजो बरस, असंख्य अबजो बरस, आत्मा की चर्चा में चला जाता है। कंटाला नहीं, दुख नहीं, प्रमोद प्रमोद वृद्धिगत प्रमोद आता है| कभी-कभी डूबकी मारकर आनंदका भोजन कर लेता है, ऐसी चर्चा चलती है वहां, सर्वार्थसिद्धि में। वहां से निकलकर साधना पूरी करके मुनि दशा धारण करके, अरिहंत होकर सिद्ध

Version 1: http://AtmaDharma.com or http://AtmaDharma.org Please report errors to rajesh@AtmaDharma.com

हो जाएगा| अहाहा!

मुमुक्षुः- यहाँ भी शुद्धआत्मा की चर्चा चलती है साहब!

उत्तरः- हां शुद्ध आत्मा की चर्चा करने जैसी हैं, बाकी सब विकथा है। कर्म की कथा, गुणस्थानकी कथा, मार्गणास्थानकी कथा सब विकथा है। आत्मा की कथा स्वकथा है। ठीक है जानने के लिए गुणस्थान, मार्गणास्थान, आठ प्रकार के कर्म, उत्तर प्रकृति १४८ कर्म की प्रकृति, सत्ता, उदय, उदीर्णा, यह सब आता है गोमटसार की बात, पर वहां रुकने जैसी बात नहीं है। रुकने का एक ही स्थान है, इधर रुक जाओ, इधर रुक जाओ, ऐसा ऐसा मत करो, (बाहर) ऐसा (अंदर) देखो। आहाहा!

ऐसा निर्णय किया तो वहाण निकल गया, अभी चकरी बंद हो गई। वावाजोड़ा पवन का। **पकड़े हुए जहाज को छोड़ दिया ऐसे समुद्र के भँवरकी भाँति**, भँवर, भँवर आती है न? भँवर तूफान, तूफान बाहर है, भँवर समुद्रमें है। भँवर उपादान है पवन तो निमित्त है। आहाहा! **भँवरकी भांति, जिसने सर्व विकल्पों को शीघ्र ही वमन कर दिया है।** मैं शुद्ध हूं, एक हूं, अभेद हूं, आ भेदज्ञान है, यै अभेदका अनुभव है। आत्मा एक हूं, शुद्ध हूं, ममत्वहीन हूं, मैं दर्शन ज्ञानसे पुर्ण हूं। वो भमरी है उसमें आत्मा फ़स जाता है। जेसा विकल्प है ऐसा है, मगर विकल्प उसमें नहीं हैं। ऐसे विकल्पातीत हो जाता है। विकल्प आता है मगर विकल्प टीकता नहीं है तो विकल्पातीत मानतीत होकर आत्मा का अनुभव कर लेता है आत्मा। यह परंपरा भारत में चालू है, दूसरा देश में यह बात नहीं है।

अमेरिका, रशिया में है नहीं क्योंकि चौबीस तीर्थंकर इधर ही हुए। आहाहा! पंचकल्याणक इधर ही होते हैं। जन्मकल्याणक भी इधर, मोक्ष कल्याणक भी इधर, इधर होते हैं। आहाहा! तो यह आत्मा की बात, भारतवर्ष में रह गई और रहने वाली है। आहाहा! कभी-कभी भर्ती ओट आता है, वह अलग बात है। भर्ती ओट पंचमकाल के बाद में छठा कालमे कोई धर्म रहने वाला नहीं है। आहाहा! दुःखमा दुःखमा, छठा काल में तो छठा काल, पंचम काल और छठा काल, उसमें वरसाद नहीं गर्मी बहुत| आहाहा! कोई झाड, पान नहीं, पक्षी नहीं, और ये जो मनुष्य है, वह कद घटते घटते इतना सा(छोटा) रह जाएगा आहाहा! और सिंधु नदी और गंगा नदी के जो प्रवाह है आज, उसका प्रवाह, एक जो बैलगाड़ी है ना, बैलगाड़ीका पहिया ऐसा धारा रहेगी। और गुफा में मनुष्य रहेगा। वह गुफा में रात भर तो रहेगा, दिवस में तो निकल सकता नहीं है। रात को निकल कर वह उसमें वह मच्छी का सेक देता है दिवस मैं, रात को खा लेता है मांसाहारी है। ऐसा आहाहा! छठा काल दुख का, आहाहा! मगर एक बार आत्मा का अनुभव हुआ, छठा काल में जन्म होता नहीं है| आहाहा!

मुमुक्षुः- ऐसी बात सुन उसको छठे काल में अवतार नहीं लेना

उत्तरः- उत्तरः- नहीं लेना। सुनने वालों को भी नहीं, ऐसा बहन कहती है। अनुभव करनेवाला को तो नहीं| मगर असे शुद्ध आत्मा की बात, अपनी चित्त की प्रसन्नता से सुने तो भावी निर्वाण भाजनम। सुनना हो मात्र, अभी तो, मगर रुचि पूर्वक। आहाहा! प्रीति पूर्वक जानता है, सुनता है, ओहो! यह मेरा आत्मा, ऐसा महिमा आता है, आत्मा का महिमा आता है। वह महिमा अंतर में से जो आया, भावी निर्वाण भाजनम। आहाहा! भविष्यवेता है मुनिराज भविष्यवेता है। जैसे केवली भगवान भविष्यवेता, मुनिराज भविष्यवेता है| ऐसे अविरत सम्यकदृष्टि किसी को निर्मल ज्ञान होता है वह भविष्यवेता है। आहाहा! ज्ञान

Version 1: http://AtmaDharma.com or http://AtmaDharma.org Please report errors to rajesh@AtmaDharma.com

की शक्ति, कोई श्रुत ज्ञानकी शक्ति अचिंत्य है भैया। आहाहा!

समुद्रके भँवरकी भाँति, **जिसने सर्व विकल्पोंको शीघ्र ही वमन कर दिया है**। वमन किया उल्टी। कुत्ता उल्टी करता है ने, ऐसा उल्टी किया तो फिर से विकल्प आता नहीं है। निकल गया सारा निकल गया। **ऐसा**, **निर्विकल्प अचलित निर्मल आत्माका अवलम्बन** याने आत्मा का विशेषण, आत्मा कैसा है निर्विकल्प है या ने अभेद है, निर्विकल्प याने गुणगुणी का भेद जीसमें नहीं है। अचलित है, पर्याय तो चलित है धृव परमात्मा तो अचलित है। और पर्याय में राग तो मलिन है। मैं तो निर्मल हूं। ऐसा **आत्मा का अवलंबन करता हुआ**, याने लक्ष करता हुआ, बाहर से लक्ष छुट जाता है।

जब सम्यकदर्शन होता है। काल आता है, तो बाहर का लक्ष छूट जाता है। गुरु का उपदेश सुनता है मगर सुनने का बंध हो जाता है सुननेका, उपकारीगुरु का लक्ष छूट जाता है। अंदर में उपयोग चले जाता है, पंडाल में बैठा हुआ अनुभव कर लेता है। ऐसी स्थिति है। **आत्माका अवलम्बन करता हुआ**, **विज्ञानघन होता हुआ**, **विज्ञानघन होता हुआ**, विज्ञानघन तो है, मगर परिणाम में विज्ञान दश आती है। द्रव्य तो विज्ञानघन है, उसमें तो राग का प्रवेश नहीं है मगर जब शुद्धउपयोग हुआ, उसमें राग का प्रवेश नहीं है। वो भी विज्ञानघन होता है, **होता हुआ**, **यह आत्मा आस्रवोंसे निवृत्त होता है**। मिथ्यात्व का छूटकारा हो जाता है, सम्यकदर्शन प्रगट हो जाता है।

मुमुक्षुः- पर्याय, पर्याय स्वरूप की रचना हो जाती है

उत्तरः- हां पर्याय, पर्याय की स्वरूप की रचना करती है, ऐसा है तब लक्ष उसका द्रव्य पर है। तो उसका अवलंबन से हुआ ऐसा भी कहा जाता है। होती है तो पर्याय निरपेक्ष अपने से, मगर उसका लक्ष आत्मा पे होता है तो आत्माके आश्रय से हुआ ऐसा भी कहा जाता है।

ॐ

Version 1: http://AtmaDharma.com or http://AtmaDharma.org Please report errors to rajesh@AtmaDharma.com